युद्ध के कारण
(Causes of War)

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में युद्ध के कारण एक बहुत महत्वपूर्ण विषय है— अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक मतभेद क्यों हिंसात्मक बन जाते हैं? अन्तर्राष्ट्रीय इतिहास युद्ध के वर्णनों से भरे हुए हैं और एक नैतिकवादी यह प्रश्न कर सकता कि लोग युद्ध में उस व्यवहार को क्यों क्षमा नहीं कर देते हैं, जिसे वे शान्ति काल में सहन करने को तैयार होते? क्या युद्ध मानवीय सामाजिक व्यवस्था में एक रोग है, या यह एक सामूहिक उन्माद है? क्या युद्ध कतिपय हितों और गुटों के षड्यंत्र की उपज है अथवा युद्ध, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का एक अंग है?

अनेक विचारकों ने युद्ध के मूल और गौण, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कारणों की विवेचना करते हुये इसे प्रायः दो भागों में बांटा है—प्रथम भाग में उन तात्कालिक कारणों को सम्मिलित किया गया है, जो युद्ध भड़का देते हैं, दूसरे भाग में उन कारणों को लिया जाता है, जो युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर रहे थे। उनके अनुसार तात्कालिक कारण चिंगारी का काम करते हैं, जो अन्य कारणों द्वारा तैयार किये गये बारूद के ढेर में विस्फोट पैदा करने का काम करते हैं। प्रथम महायुद्ध के कारणों का अध्ययन करते हुए **प्रो० सिडनी बी० फे (Sidney B. Fay)** ने बताया है कि युद्ध का सबसे मूल कारण गुप्त सन्धियों की व्यवस्था (System of Secret Alliances) थी परशियन जो फ्रांको-परशियन युद्ध के बाद प्रारम्भ हुई थी। दूसरे अन्य सहायक कारण चार थे—सैनिकवाद, राष्ट्रवाद, आर्थिक साम्राज्यवाद और समाचार-पत्रों की भूमिका। **टर्नर (Tell A. Turner)** ने अपनी पुस्तक युद्ध के कारण और नवीन क्रान्ति (The Causes of War and the New Revolution) में युद्ध के 41 कारणों का उल्लेख किया है। वे इन कारणों को चार भागों में विभाजित करते हैं—आर्थिक, राजवंश सम्बन्धी, धार्मिक और भावात्मक। **अन्य अनेक विचारकों** द्वारा भी युद्ध के कारणों की व्याख्या की गयी है। **क्विंसी राइट** (Quincy Wright) ने भी युद्ध के विभिन्न कारणों का वर्णन करते हुये लिखा है, कि कुछ तो मूल कारण होते हैं और कुछ तात्कालिक। कभी-कभी कुछ घटनाएँ युद्ध का कारण बन जाती हैं, कभी लोगों की मनोभावनाएँ एवं महत्वाकांक्षाएँ युद्ध को उकसाती है। इनके अतिरिक्त शस्त्रों की दौड़, कूटनीतिक व्यवहारों की अकुशलता, वाणिज्य-नीतियाँ, सम्प्रभुता की मान्यता, उपनिवेशों के मतभेद, देश के विस्तार की प्रवृत्ति और अन्य बातें भी प्रत्यक्ष रूप से युद्ध को भड़काने में सहायक होती हैं। क्विंसी राइट के मतानुसार युद्ध के कारणों को कई दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। इसके राजनीतिक, तकनीकी, सैद्धान्तिक, सामाजिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक तथा आर्थिक कारण हैं।

सैन्य विचारक **जोमिनी** ने युद्ध के कारणों की विवेचना करते हुए निम्नलिखित छः कारणों का उल्लेख किया है—

(i) राष्ट्र राज्य के कुछ सुनिश्चित अधिकारों का दावा करना या रक्षा करना।

(ii) राष्ट्र राज्य के महत्वपूर्ण हितों को बनाये रखना या उनकी रक्षा करना।

(iii) शक्ति सन्तुलन को बनाये रखने के लिए।

Scanned by CamScanner

(iv) राजनीतिक तथा धार्मिक सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार के लिए या विपरीत सिद्धान्तों के दमन के लिए।

(v) भूमि के अधिग्रहण द्वारा राज्य की शक्ति और उसके प्रभाव को बढाने के लिए।

(vi) विजय प्राप्ति के लिए आक्रमण के उन्माद को बढ़ाने के लिए।

जोमिनी द्वारा वर्णित उपरोक्त सभी छः कारण बीसवीं शताब्दी आते-आते बदलती अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिस्थितियों की बजट से अपर्याप्त प्रतीत होने लगे, जिसका प्रमुख कारण राजनीति में उत्पन्न नई जटिलताएँ थीं, जिसने युद्ध के कारणों को और भी व्यापक स्वरूप प्रदान कर दिया। अतः विश्लेषकों के लिए यह आवश्यक हो गया कि युद्ध के कारणों की सम्यक व्याख्या कर प्रयास किया जाये।

स्टीवेन जे० रोजन तथा **वाल्टर ए० जोन्स** ने अपनी 1974 में प्रकाशित पुस्तक 'The Logic of International Relations' में युद्ध के बारह कारणों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया और इन्हें युद्ध के कारणों के बारह सिद्धान्तों (Twelve Theories of the Causes of War) का नाम दिया है। ये बारह सिद्धान्त हैं—

1. शक्ति-विषमता (Power Asymmetries)
2. राष्ट्रवाद, अलगाववाद और क्षेत्र विस्तारवाद (Nationalism, Separatism and Irredentism)
3. अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विकासवाद (International Social Darwinism)
4. पारस्परिक सन्देहबोध (Mutual Misperception)
5. अनियंत्रित शस्त्र प्रतिस्पर्धा (Runaway and Uncontrolled Arms Races)
6. युद्ध से आन्तरिक एकीकरण की अभिवृद्धि (The Promotion of Internal Integration through External Conflict)
7. स्वतः प्रेरित आक्रमण, हिंसा के प्रति सांस्कृतिक रुझान और युद्ध-शान्ति के चक्र (Instinctual Aggression, Cultural Propensities to Violence and War-Peace Cycles)
8. आर्थिक और वैज्ञानिक उत्तेजनाएँ (Economic and Scientific Stimulation)
9. सैनिक-औद्योगिक समूह (The Military–Industrial Complexes)
10. सापेक्ष हानि (Relative Deprivation)
11. जनसंख्या नियन्त्रण (Population Limitation)
12. संघर्ष उपशमन (Conflict Resolution)

1. शक्ति-विषमता (Power Asymmetries)—युद्ध का एक प्रमुख राजनीतिक कारण शक्ति-विषमता है, अर्थात् शक्ति के वितरण में असमानता होने से युद्ध को प्रोत्साहन मिलता है। विरोधियों में जब शक्ति का सन्तुलन बना रहता है, तो युद्ध न होने की संभावनायें प्रबल होती हैं और जब विरोधियों में शक्ति का असन्तुलन पैदा हो जाता है, तो आक्रमण का मार्ग खुल जाता है। अतः अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति को बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि दोनों पक्षों के लिए तकनीकी और अन्य शक्तियों में समता बनी रहे, सन्तुलन बिगड़ने न पाए। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में जब शक्ति-शून्यता (A Vacuum of Power) की स्थिति उत्पन्न होती है तो इससे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में अस्थिरता आने लगती है और सैनिक महत्वाकांक्षाओं को प्रोत्साहन मिलता है। इस विचार के समर्थकों का मानना है कि अन्तर्राष्ट्रीय जगत में संघर्ष के अवसर और विवाद सदैव उपस्थित रहते हैं और युद्ध का तात्कालिक कारण प्रायः यही बनता है कि शक्ति सन्तुलन बिगड़ जाता है, शक्ति के वितरण में विषमता आ जाती है।

'सघर्ष' में एक पक्ष मूल्यों के पुनर्वितरण का पोषक होता है, जबकि दूसरा यथापूर्व स्थिति बनाए रखना चाहता है, अर्थात् जब आक्रमण और सुरक्षा के बीच एक स्पष्ट अन्तर हो तो शान्ति एक विशेष प्रकार की

Scanned by CamScanner

विषमता द्वारा ही कायम रखी जा सकती है अर्थात् शान्ति तभी अधिक सुरक्षित रह सकती है, जब अक्रान्तिकारी विरोधी की श्रेष्ठता स्थापित हो जाए। उदाहरणार्थ, विन्स्टन चर्चिल ने मार्च, 1946 में 'लौह आवरण' को अपनी प्रसिद्ध फुल्टन भाषण में कहा था कि सोवियत आक्रमण को केवल पाश्चात्य सैनिक श्रेष्ठता के बल पर ही रोका जा सकेगा।

विषमताओं (Asymmetries) मे तात्पर्य औद्योगिक क्षमता, जनसंख्या एवं युद्ध क्षमताओं के अन्य भौतिक तत्व ही नहीं है, बल्कि अधिक गतिशील और चल राजनीतिक तत्वों से भी है। मित्र राष्ट्रों को, जो पारस्परिक सुरक्षा हेतु साधनों को संगठित करने के इच्छुक हों, एक सूत्र में बनाये रखने की योग्यता का विशेष महत्व है। आधुनिक जगत में केवल दो राज्य रूस एवं अमेरिका, अकेले संकटों का सामना करने में समर्थ हैं, परन्तु संयुक्त कार्यवाही से उन्हें भी अनेक राजनीतिक व रणनीति सम्बन्धी लाभ मिलते हैं। छोटे राज्यों के लिए, विषमताओं को दूर करने में सन्धियों को कायम रखना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ, इजरायल अमेरिका पर व सीरिया रूस पर आश्रित हैं।

एक अन्य तत्व 'इच्छा' है। यदि एक पक्ष लड़ने को उद्यत न हो तो श्रेष्ठ क्षमताएँ व ठोस सन्धियाँ भी विषमताओं की जनक बन जाती हैं। इसके विपरीत सीमित साधनों व समर्थन वाला राज्य भी अपनी क्षमताओं के पूर्ण उपयोग से विषमताओं को रोक सकता है। राजनीतिक विषमताओं को रोकने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दोनों राज्यों में पूर्ण सन्तुलन हो बल्कि केवल समर्थ आक्रामकों को इस बात का पूर्व ज्ञान हो कि विरोध पर विजय प्राप्त करने का मूल्य लाभों से अधिक है। अतएव सत्ता का असन्तुलन युद्ध का एक कारण है जिसे नियंत्रित किया जा सकता है।

2. राष्ट्रवाद, अलगाववाद और क्षेत्र विस्तारवाद (Nationalism, Separatism and Irredentism)—राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय आन्दोलन युद्ध के दूसरे कारण हैं। राष्ट्रवाद एक सामूहिक अभिव्यक्ति है जो विभिन्न व्यक्तियों को एक सूत्र में बांधता है। राष्ट्र व्यक्ति का सर्वोपरि सम्बन्ध व कर्तव्य बन जाता है तथा वैयक्तिक रूप राष्ट्रीय समूह में परिवर्तित हो जाता है।

एक समूह से आवश्यक लगाव, दूसरे समूहों से विवाद का कारण बन जाता है। 1969 में एक शोध दल ने ऐसे 560 महत्वपूर्ण विवादों का उल्लेख किया था, जिनके 15 वर्षों में हिंसा में परिणत होने की प्रबल सम्भावना है। उन विवादों की लम्बी सूची का वर्गीकरण निम्नलिखित है—

(1) राष्ट्रीय विवाद, जिनमें जातीय, धार्मिक व भाषायी समूहों के विवाद शामिल किये जा सकते हैं।

(2) वर्ग-विवाद जिनमें आर्थिक शोषण के विवाद सम्मिलित हैं।

(3) अन्य विवाद जो समरूप समूहों व वर्गों के विवाद से परे हैं।

इन विवादों में 70 प्रतिशत राष्ट्रीय व जातीय विवाद हैं, जबकि शेष वर्गीय व अन्य विवाद है। वस्तुतः युद्ध को जन्म देने के कारणों में 'राष्ट्रीयता' एक प्रभावी तत्व है, जो अन्य कारणों की अपेक्षा रक्तपात के लिए अधिक उत्तरदायी है। जाति, भाषा, धर्म व वंश के आधार पर गठित समूहों की सीमा व राजनीतिक मांगों द्वारा ही राष्ट्रीयता व युद्ध में सम्बन्ध स्थापित होता है।

आधुनिक युद्ध में राष्ट्रीय उग्रवाद के दो प्रमुख रूप मुख्यतया प्रभावी होते हैं—पृथकतावादी व क्षेत्र विस्तारवादी। पृथकतावादी रूप में एक राष्ट्रीय समूह वर्तमान राज्य से पृथक होकर एक नए समूह की रचना का प्रयास करता है, जबकि क्षेत्र विस्तारवादी रूप में एक वर्तमान राज्य दूसरे राज्य की भूमि व जनसंख्या का दावा करता है। इन दोनों तथ्यों का विस्तृत विवरण निम्नवत् है—

अलगाववाद और युद्ध (Separatism and War)—विश्व के अनेक राज्यों में अल्पसंख्यक सम्मिलित हैं। सदियों तक अन्य समूहों के साथ रहते हुए भी अल्पसंख्यक समुदाय स्वयं को पृथक अनुभव करते हैं। यह भावना पृथकतावादी आन्दोलन में परिणत हो जाती है और राज्य की भूमि में से ही पृथक भूमि

Scanned by CamScanner

पर पृथक राज्य की अथवा वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था के नियंत्रण से मुक्त आन्तरिक स्वायत्तता की मांग की जाती है। तात्कालिक राजनीतिक व्यवस्था द्वारा राज्य की राजनीतिक व सीमा सम्बन्धी एकता के हित में पृथकतावादी मांगों का साधारणतया विरोध किया जाता है। अतः पृथकतावादी मांगों के सम्बन्ध में विवाद युद्ध के कारण बन जाते हैं। उदाहरणार्थ, पाकिस्तान के पूर्वी भाग की बांग्ला जनता द्वारा 1971 में पश्चिमी भाग से पृथक होने के लिए युद्ध किया गया, जिसके परिणामस्वरूप स्वतंत्र बांग्लादेश के रूप में एक नए राज्य का निर्माण हुआ।

इसी प्रकार अनेक राज्यों में भाषा व नस्लों के आधार पर भी पृथक राज्यों की माँग की जाती है। संघीय राज्यों में, जहाँ परिस्थितिवश अथवा इच्छा द्वारा विभिन्न जन-समूह अपने हितों की रक्षा के लिए सक्रिय हों, वहाँ विवाद खड़े हो जाते हैं तथा पृथकतावादी आन्दोलनों और युद्धों का जन्म होता है।

क्षेत्र विस्तारवाद एवं युद्ध (Irredentism and War)—क्षेत्र विस्तारवाद का अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अधिक महत्व रहा है। वस्तुतः विश्व की समस्त जनसंख्या व धरातल किसी न किसी राष्ट्रीय राज्य की सीमा के अन्तर्गत होते हैं। तथापि सीमा निर्धारण में (युद्ध और विजय के द्वारा) बहुत-से स्थानों पर एक जन-समूह दो राज्यों की सीमाओं में आ जाता है। इस समूह के पुनः एकीकरण के प्रयासों के परिणाम स्वरूप भूमि-अपहरणवाद का संघर्ष आरम्भ हो जाता है। उदाहरणार्थ, पाकिस्तान कश्मीर पर इसी आधार पर दावा करता है कि वहाँ की जनसंख्या मुस्लिम है। भूमि-अपहरणवाद के कुछ दावे तो इस प्रकार के हैं कि सम्पूर्ण राज्य ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से विलुप्त हो जाएंगे। यद्यपि पृथकतावाद और भूमि अपहरणवाद वंशीय प्रश्नों से प्रारम्भ होते हैं, परन्तु ये आर्थिक एवं प्राकृतिक साधनों से भी सम्बन्धित होते हैं। आर्थिक समस्याओं के अतिरिक्त इस प्रकार के आन्दोलनों ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक संकट उपस्थित कर दिया है। राष्ट्रीय आत्म-निर्णय का सिद्धान्त महत्वपूर्ण है, जिससे इस प्रकार के संघर्षों को समर्थन मिलता है।

3. **अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विकासवाद (International Social Darwinism)**—अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विकासवाद का दर्शन युद्ध का तीसरा कारण है। समाज भी विकसित होते हैं तथा प्रतिस्पर्धा में सबल समाज आगे बढ़ जाते हैं। सभ्यता के विकास के लिए सामाजिक विकासवादी युद्ध को आवश्यक मानते हैं। युद्ध के परिणामस्वरूप सत्ता का नियंत्रण निर्बल हाथों से निकल कर सबल हाथों में आ जाती है। यह दर्शन फासीवाद का आधार रहा है। **मुसोलिनी** के शब्दों में, "फासीवादी सार्वजनिक शान्ति की सम्भावना अथवा उपयोगिता में विश्वास नहीं करता तथा शान्तिवाद को अस्वीकार करता है, जो कायरता एवं समर्पण को प्रोत्साहित करता है। केवल युद्ध द्वारा मानवीय शक्तियों का विकास चरम सीमा तक होता है तथा युद्ध तो उन व्यक्तियों की श्रेष्ठता स्थापित करता है, जिनमें सामना करने की क्षमता है।"

फासीवाद विभिन्न समाजों के उन प्राणियों को एक समान मानता है जो रक्त सम्बन्धों से बंधे हुए हैं तथा इस दर्शन का निष्कर्ष नाजीवाद है, जिसके दो सिद्धान्त 'जाति तथा सीमा' है और जो जातियों की समानता में विश्वास न कर उनके अन्तर के अनुपात में उनका मूल्यांकन करता है। जनसंख्या में वृद्धि होती रहती है, परन्तु स्थान सीमित होने के कारण जातियों को स्थान के लिए संघर्ष करना पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विकासवाद विवाद तथा समूहों की विभिन्नताओं को महत्व देता है। फासीवादी व नाजीवादी आन्दोलनों का यद्यपि अन्त हो गया है, परन्तु फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक विकासवाद का सिद्धान्त जीवित है।

4. **परस्पर सन्देहबोध (Mutual Misperception)**—विवादों के इतिहास में परस्पर सन्देह का सिद्धान्त भी युद्ध का एक कारण माना जाता है। राष्ट्र एक दूसरे को अपनी विचारधाराओं के अनुसार देखते हैं जैसा कि शीत-युद्ध में प्रायः होता है। इस प्रकार विचारधारायें पारस्परिक संदेहों को जन्म देती हैं। एक राष्ट्र द्वारा अन्य राष्ट्र के विषय में जो मान्यताएँ बनती हैं, वे वास्तविकता से परे होती हैं तथा अनुभव के परिप्रेक्ष्य में भी नहीं बदलती। संवादहीनता, परस्पर सन्देह और सुरक्षा का भय अन्तर्राष्ट्रीय तनावों को बढ़ा कर युद्ध को प्रोत्साहित करते हैं।

Scanned by CamScanner

5. अनियंत्रित शस्त्र प्रतिस्पर्धा (Uncontrolled Arms Races)—अनियंत्रित शस्त्रास्त्रों की प्रतिस्पर्द्धा का दर्शन भी युद्ध का कारण है। विरोधी राष्ट्र पारस्परिक भय के कारण एक दूसरे से डरते हैं तथा एक के द्वारा की गई सुरक्षात्मक कार्यवाही को आक्रामक विचारों से प्रभावित मानते है और उसके प्रत्युत्तर में शस्त्रों से सुसज्जित होने का प्रयास करते है। शस्त्रों तथा सैनिक गठबन्धनों के क्षेत्र में प्रतिस्पर्द्धा होती है एवं प्रत्येक पक्ष श्रेष्ठता के लिए प्रयत्नशील रहता है। शस्त्रास्त्रों की दौड़ सक्रिय विवादों को जन्म देती है और पराकाष्ठा पर पहुंच कर युद्ध में बदल जाती है। उदारवादी विचारकों के अनुसार, अत्यधिक सैन्य तैयारी तथा शस्त्रास्त्रों का संचय युद्ध के कारण हैं। जबकि अनुदारवादियों की मान्यता है कि ये शान्ति को बनाये रखने में सहायक हैं। नारमन कर्जिस द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार 650 ई० पू० से अब तक शस्त्रास्त्रों की होड़ों में से केवल 16 युद्ध में परिणत नहीं हुई तथा इन अपवादों में से अधिकांश आर्थिक संकट का शिकार बनीं। सैम्युअल पी० हंटिगटन के अध्ययन के अनुसार शस्त्रास्त्रों की प्रतिस्पर्धा की परिणति युद्ध में हुई। शस्त्रास्त्रों की प्रतिस्पर्द्धा और युद्ध में निकटता होते हुए भी यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है, कि शस्त्रास्त्रों की दौड़ के परिणामस्वरूप युद्ध हुए। महत्वपूर्ण राजनीतिक विवाद ही शस्त्रास्त्र की दौड़ तथा युद्ध के कारण हैं। शस्त्रों की होड़ तथा भय विवादों की अग्नि में घी का काम करते हैं, परन्तु नए विवाद इनके कारण उत्पन्न नहीं होते हैं।

6. युद्ध से आन्तरिक एकीकरण की अभिवृद्धि (The Promotion of Internal Integration through External Conflict)—इस सिद्धान्त के अनुसार, युद्ध आन्तरिक एकीकरण को बढ़ाने में सहायक होते हैं। बाह्य संघर्ष के माध्यम से आन्तरिक एकीकरण की दिशा में किए गए प्रयास कालान्तर में युद्ध को जन्म देते हैं—शत्रु का सामना करने के लिए एकीकरण की प्रक्रिया युद्ध को बढ़ावा देती है। 1866 से 1871 के मध्य बिस्मार्क ने तीनों युद्ध जर्मन राज्यों के एकीकरण के उद्देश्य से लड़े गये थे। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आन्तरिक विघटन की अपेक्षा युद्ध को प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

7. स्वतः प्रेरित आक्रमण, हिंसा के प्रति सांस्कृतिक रुझान और युद्ध-शान्ति के चक्र (Instinctual Aggression, Cultural Propensities to Violence and War-Peace Cycles)—आक्रमण की भावना का सिद्धान्त युद्ध के सर्वाधिक लोकप्रिय कारणों में से है। मानव का स्वभाव युद्धप्रिय होता है। हिंसा में उसे आनन्द की अनुभूति होती है इसलिए टेलीविजन तथा चलचित्रों में लड़ाई और हिंसा को प्रदर्शित किया जाता है। आक्रामक भावना और युद्ध के निश्चित सम्बन्ध के विषय में मतभेद हैं। 25 युद्धों के अध्ययन से ज्ञात हुआ कि भावनाओं के कारण युद्ध करने का निश्चय नहीं किया गया। अन्य विचारक आक्रमण को भावना से सम्बन्धित करते हैं। राजनीतिक विवादों को छेड़ने से आक्रामक भावना पनपती है, जिससे युद्ध का जन्म होता है।

अनेक अध्ययन वास्तविक तथा अवास्तविक विवादों में अन्तर करते हैं। वास्तविक विवाद में संघर्ष का कारण उद्देश्य सम्बन्धी मतभेद होता है, जबकि अवास्तविक विवादों में अन्य कारण तो बहाना मात्र होते हैं और लड़ने वालों का मुख्य उद्देश्य हिंसा रहता है। कुछ विचारकों के अनुसार, आक्रमण की समस्या का समाधान आक्रामक भावना को नष्ट करने में न होकर उसे रचनात्मक दिशा प्रदान करने में है। आक्रामक भावनाएँ राष्ट्रीय नीतियों के निर्माण में सहायक होती हैं तथा राष्ट्रीय विचारधारा को प्रभावित करती हैं।

8. आर्थिक और वैज्ञानिक उत्तेजनाएँ (Economic and Scientific Stimulation)—युद्ध का आर्थिक कार्यों से सम्बन्ध है। युद्ध ने वैज्ञानिक खोज, तकनीकी सुधार व औद्योगिक विकास को गति प्रदान की है। कुछ विचारक यह मानते हैं कि सैन्य व्यय उचित है और उसमें कटौती करने से अनेक उद्योगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यदि यह मान लिया जाये तब भी यह निष्कर्ष निकलना गलत है कि युद्ध व्यापार के लिए उचित है। बड़े युद्धों के आर्थिक दुष्परिणाम निकलते हैं, मुद्रा प्रसार की वृद्धि होती है, साख घट जाती है, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं तथा आर्थिक प्रवाह में अवरोध उत्पन्न हो जाता

Scanned by CamScanner

है। बड़े युद्ध लाभकारी भले ही न हो, परन्तु रक्षा पर व्यय पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करता है। आर्थिक लाभ की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय तनाव बनाए रखना लाभकर होता है। युद्ध न हो तब भी रक्षा पर व्यय शीतयुद्ध को कायम रखने में सहायक होता है।

9. सैनिक-औद्योगिक समूह (The Military-Industrial Complexes)—सैनिक-औद्योगिक समूह भी युद्ध का कारण बन जाते हैं। शक्तिशाली आन्तरिक समूह, जिनके हित सैन्य-व्यय में निहित होते हैं, राष्ट्रों में तनाव व विरोध बनाए रखने में अपने प्रभाव का उपयोग करते हैं। इन आन्तरिक समूहों में सैनिक औद्योगिक संस्थाएँ सम्मिलित हैं—(1) व्यावसायिक सिपाही, (2) व्यवस्थापक तथा पूंजीवादी सैन्य उद्योगों के स्वामी, (3) राज्य के उच्च अधिकारी, जिनके हित सैन्य व्यय से जुड़े हुए होते हैं, तथा (4) विधायक, जिनके निर्वाचन क्षेत्रों को रक्षा योजनाओं से लाभ पहुंचता है। इन सैनिक-औद्योगिक संस्थाओं के सदस्यों को अन्य छोटे समूहों का समर्थन भी प्राप्त होता है। ये समूह राजनीतिक व्यवस्था में अपना प्रभाव बढ़ा लेते हैं तथा रक्षा व्यय की राशि में कटौती नहीं होने देते एवं राष्ट्रीय सुरक्षा नीति के निर्माण को प्रभावित करते हैं। विरोधी हितों की तुलना में इन संस्थानों का प्रभाव अधिक होता है। सैन्य व्यय के लिए ये सैद्धान्तिक विवाद खड़े कर देते हैं तथा शीतयुद्ध जैसी स्थिति को यथावत् बनाए रखने में अपने हितों का संरक्षण मानते हैं।

यह सिद्धान्त पूंजीवादी समाजवादी व्यवस्थाओं में समान रूप से सक्रिय रहता है। इसमें कुछ दोष हैं। राष्ट्रीय उत्पादन में कमी होने के कारणों पर इस सिद्धान्त का कोई औचित्य सिद्ध नहीं होता फिर भी आर्थिक नीतियों के निर्माण में इन संस्थानों का बहुत योगदान होता है।

10. सापेक्ष हानि (Relative Deprivation)—सापेक्षिक हानि का सिद्धान्त आन्तरिक युद्धों के कारणों का विश्लेषण करने में सहायक होता है। जब व्यक्ति यह अनुभव करते हैं कि उन्हें वर्तमान व्यवस्था में उचित लाभ नहीं मिल रहा है, तो राजनीतिक विद्रोहों तथा विप्लवों को प्रोत्साहन देते है तथा अधिक लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से राजनीतिक हिंसा व आक्रामक कार्यवाही की ओर बढ़ाते हैं। निर्धनता तथा अत्याचार प्रत्यक्षतः विद्रोहों को जन्म नहीं देते, बल्कि इन दशाओं का मनोवैज्ञानिक प्रत्युत्तर निश्चित करते हैं। प्रायः हिंसा तब फैलती है, जब स्थितियों में सुधार हो रहा होता है, न कि तब जबकि स्थितियाँ खराब होती हैं। 1945 के बाद में लड़ी गयी लड़ाइयाँ विकासशील देशों में हुई, न कि विकसित देशों में। विकसित देशों में इस काल में केवल छुटपुट घटनाएँ ही हुई। धनी देश अपनी सीमाओं से परे अन्य देशों के विवाद में पड़ जाते हैं।

11. जनसंख्या नियंत्रण (Population Limitation)—जनसंख्या में वृद्धि युद्धों को जन्म देती है। खाद्यान्नों की तुलना में जनसंख्या में वृद्धि अधिक होती है। खाद्यान्नों की मात्रा के अनुसार जनसंख्या को नियंत्रित किया जाना चाहिए और युद्ध द्वारा यह नियंत्रण संभव है, परन्तु यह सिद्धान्त नये तथ्यों पर सही नहीं है। युद्धों में अधिक संख्या में व्यक्तियों की ही मृत्यु नहीं होती। केवल अपवादस्वरूप कुछ युद्धों में अधिक संख्या में जीवन का विनाश हुआ, परन्तु वहाँ भी अधिकाधिक 5 प्रतिशत व्यक्तियों की मृत्यु ही हुई। हरित क्रान्ति द्वारा खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि सम्भव है तथा जनसंख्या के नियंत्रण के लिए युद्ध को तर्कसंगत नहीं सिद्ध किया जा सकता है।

12. संघर्ष उपशमन (Conflict Resolution)—युद्ध विवादों के निदान में सहायक होते हैं। सामान्यतया दो अथवा दो से अधिक समूह किन्हीं साधनों तथा स्थितियों पर अपना-अपना दावा करते हैं तथा युद्ध नीतियाँ उत्पादन, व्यय और लाभ की दृष्टि से निर्मित की जाती हैं, परन्तु यह विवादास्पद प्रश्न है। विवादों का निदान पंच फैसले, चुनाव, अदालतों तथा प्रशासनिक निर्णयों द्वारा भी संभव है। वार्ता, मध्यस्थता तथा समझौतों के द्वारा भी विवादों को हल किया जा सकता है। फिर भी अन्ततः युद्ध द्वारा विवादों के हल के प्रयास किये गये।

युद्ध के 12 कारणों के अतिरिक्त षड्यंत्रों, छिपे उद्देश्यों तथा गुणी लोगों के प्रभाव के कारण भी युद्ध लडे जाते हैं।

Scanned by CamScanner

स्टीड (Wickham Steed) ने युद्ध के कारणों में भय को प्रधान माना है। 'असुरक्षा की भावना' निश्चय ही आज के विश्व में युद्ध का सबसे प्रमुख कारण है। दूसरे विचारक, सम्प्रभु राज्यों के अस्तित्व को युद्ध का प्रमुख कारण मानते हैं। **आर्नल्ड ब्रेक्ट** (Arnold Brecht) ने लिखा है, कि राज्यों के बीच युद्ध होते हैं, इसका सबसे प्रमुख कारण यह है कि विश्व में सम्प्रभु राज्य हैं। इसी बात पर टिप्पणी करते हुए क्विंसी राइट ने कहा है कि युद्ध का कारण सम्प्रभु राज्यों का अस्तित्व है, युद्ध इस कारण होता है कि विभिन्न देश सम्प्रभु बनना चाहते हैं। युद्ध प्रायः इस कारण होते हैं, क्योंकि देशों की शक्ति के प्रयोग को नियंत्रित करने के लिए कानून अथवा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन जैसी कोई सशक्त व्यवस्था नहीं है। कुछ विचारक युद्ध को मनुष्य की प्रकृति में निहित मानते हैं। उनका तर्क यह है, कि मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही युद्धों के अस्तित्व है। दूसरी ओर पामर तथा पंर्किस जैसे विचारकों का कथन है कि इतिहास से युद्ध के उदाहरणों का संकलन करने पर भी यह कहना उचित नहीं कि मनुष्य युद्धप्रिय होता है, वरन् यह कहा जा सकता है कि मनुष्य अब तक कोई ऐसी आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था निर्मित करने में असफल रहा है, जो युद्ध से मुक्त हो।

वस्तुतः युद्ध का कोई एक विशेष कारण नहीं बताया जा सकता। **क्विंसी राइट** (Quincy Wright) के अनुसार, युद्ध वास्तव में एक ऐसी परिस्थिति का परिणाम है, जो उन सारी चीजों से पैदा होती है जो युद्ध प्रारम्भ होने तक मनुष्य जाति में हुई है। युद्ध के कारण ही प्रायः एक देश की राष्ट्रीय नीति के आधार बन जाते हैं। राष्ट्रवाद, साम्राज्य, सम्प्रभुता एवं युद्ध के अन्य उपर्युक्त कारण जब एक देश की राष्ट्रीय नीति का आधार बन जाते हैं, तो युद्ध प्रारम्भ होता है। **पामर** तथा **पार्किन्स** के मत में जब कुछ परिस्थितियाँ युद्ध का कारण बनती हैं तो वही परिस्थितियाँ उस देश की राष्ट्रीय नीति का आधार बन जाती है।

युद्ध के कार्य
(The Functions of War)

युद्धों द्वारा अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के कारण ही विभिन्न देश इसका सहारा लेते हैं। यदि युद्ध से केवल हानियाँ ही होतीं अथवा यह नितान्त निरर्थक होता तो यह कभी का मिट गया होता। विश्व में युद्ध का अस्तित्व तब तक रहेगा जब तक मानव जाति के शासक इसका कोई विकल्प नहीं खोज निकालते। युद्ध से जिन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है उनको दूसरे किसी साधन द्वारा प्राप्त करना असंभव है और यही कारण है कि युद्ध खर्चीला, विध्वंसक तथा हिंसात्मक होने पर भी अपनाया जाता है। **क्लाइड ईगल्टन** (Clyde Eagleton) का कथन है कि युद्ध से कुछ साध्यों की प्राप्ति होती है। युद्ध से जिन उद्देश्यों की प्राप्ति होती है वे एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े रहते हैं कि उनमें से कौन सा प्रधान है तथा कौन सा गौण, यह निश्चित करना बड़ा कठिन हो जाता है। युद्ध के विभिन्न कार्य निम्नवत् हैं—

1. न्याय की स्थापना—युद्ध चाहे कितना भी बुरा हो, इसके द्वारा समाज में फैले हुए अनेक अन्यायों को दूर किया जाता है। अन्य साधन द्वारा इस बुराई को दूर करना सम्भव नहीं होता क्योंकि मनुष्य की अन्याय की संभावनाएँ उसके स्वार्थ में गहरी जमी रहती हैं तथा सुधारवादी नीतियाँ उसको नष्ट करने में असमर्थ रहती हैं। युद्ध द्वारा जो नीतियाँ संचालित की जाती हैं वे यथार्थवादी होती हैं और उसकी सफलता में निश्चितता का पुट रहता है। यही कारण है कि शताब्दियों से युद्ध को अन्याय दूर करने के विकल्प के रूप में अपनाया जा रहा है। **प्रो० शाटवेल** (Professor Shotwel) के अनुसार, युद्ध का प्रयोग जैसे आक्रमणों के लिए किया गया है, उसी प्रकार अन्यायपूर्ण आक्रमणों के विरोध के साधन के रूप में युद्ध का प्रयोग किया गया है।

2. शोषण का विरोध—जब किसी देश, वर्ग, जाति या धर्म के लोगों द्वारा दूसरे देश, वर्ग जाति या धर्म के लोगों का शोषण इस आधार पर किया जाए कि वे शक्तिशाली हैं, तो प्रायः शोषित वर्ग युद्ध जैसे

Scanned by CamScanner

हिंसात्मक साधन का सहारा लेते हैं। इतिहास साक्षी है कि व्यक्ति एवं समुदायों द्वारा स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए तथा शोषण से मुक्ति के लिए अनेक बार युद्ध लड़े गये हैं। अमेरिका की क्रान्ति, फ्रांस की क्रान्ति, लैटिन अमेरिकियों का स्वतंत्रता संग्राम, अमेरिका का गृह युद्ध तथा स्पेन-अमेरिकी युद्ध आदि उदाहरणों तथा उनके परिणामों को देखकर यह कहा जा सकता है कि युद्ध के अनेकों दुष्परिणामों के बावजूद भी इसको स्वतंत्रता के अधिकार, न्याय आदि की प्राप्ति के साधन के रूप में अपनाया जाता है।

3. युद्ध सम्प्रभुता की अभिव्यक्ति का साधन है—अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रत्येक राष्ट्र सम्प्रभु है। यदि वास्तव में आप युद्ध को समाप्त करना चाहते हैं, तो राज्यों की सम्प्रभुता को मिटाना होगा जिसे कोई भी राज्य स्वीकार नहीं कर सकता। विश्व शान्ति की स्थापना के लिए एक राज्य सब कुछ स्वीकार कर लेगा, किन्तु वह आत्मरक्षा (Self-defence) के अधिकार को नहीं छोड़ेगा क्योंकि यह उसकी सम्प्रभुता का परिचायक है। एक राज्य पर अनेक उत्तरदायित्वों का भार रहता है, इन उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए उसे सम्प्रभुता की आवश्यकता रहती है और जब तक सम्प्रभुता रहेगी तब तक युद्ध भी रहेगा। **पामर** तथा **पर्किन्स** का मत है कि राज्यों को तब तक युद्ध के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता जब तक उन पर अनेक उत्तरदायित्व पूर्ण करने का भार है।

4. युद्ध आधुनिक विश्व का निर्माता—युद्ध द्वारा एक राष्ट्र के व्यक्तित्व का सही अर्थों में निर्माण होता है। युद्धों के द्वारा ही एक राष्ट्र की सीमाएँ निर्धारित की जाती हैं। **प्रोफेसर शाटवैल** का कथन है कि आज के विश्व का नक्शा अधिकांशतः युद्ध के मैदानों में ही निश्चित किया गया है। **क्विंसी राइट** (Quincy Wright) के मतानुसार युद्ध को विश्व के महत्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तनों के लिए, राष्ट्रीय राज्यों के निर्माण के लिए, आधुनिक सभ्यता का विश्व व्यापी प्रसार करने के लिए तथा उस सभ्यता के प्रभावकारी हितों को परिवर्तित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। कानून, विदेश नीति, सैनिक, तकनीकी तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की कुछ परिस्थितियों में युद्ध नीति का एक मूल्यवान साधन बन जाता है। पामर तथा पर्किंस के शब्दों में, "युद्ध आधुनिक विश्व का, उसके राज्यों, कारखानों, उसकी नैतिकता और उसके सांस्कृतिक रूप का प्रमुख निर्माता रहा है।"

5. युद्ध विकास को बढ़ाता है—युद्ध, राष्ट्रों के विकास के लिए आवश्यक है। युद्ध, एक ऐसी प्रक्रिया है, जो कमजोर राष्ट्रों का उन्मूलन कर देती है तथा शक्तिशाली लोगों के उन्नति व विकास के लिए मार्ग प्रशस्त कर देती हैं। **बर्नहार्डी** (Bernhardi) के मतानुसार, युद्ध विकास की प्राणिशास्त्रीय आवश्यकता है। बिना युद्ध कमजोर जातियाँ स्वस्थ तत्वों के विकास को रोक देंगी तथा पतन प्रारम्भ हो जाएगा।

युद्ध के उपर्युक्त कार्यों को अतिशयोक्ति बताकर इनकी आलोचना की जा सकती है, किन्तु इनको पूरी तरह से असत्य नहीं माना जा सकता। **विलर्ड वालर** (Willard waller) के मतानुसार, युद्ध से कोई लाभ नहीं है। तथा किसी भी समस्या को इसके द्वारा नहीं सुलझाया जा सकता, किन्तु **पामर** तथा **पार्किन्स** का मानना है कि प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध किया जा सकता है कि युद्ध के द्वारा कभी-कभी अनेक लाभ प्राप्त हो जाया करते हैं। इसलिए युद्ध का विरोध करते समय यह तर्क देना अनुचित है कि इससे कुछ भी प्राप्त नहीं होता है, वरन् कहना यह चाहिये कि युद्ध एक अमानवीय साधन है, जिसका उपयोग यथासम्भव अच्छे उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए भी नहीं करना चाहिये।

Scanned by CamScanner